आगम-अनुयोग

भाग-1

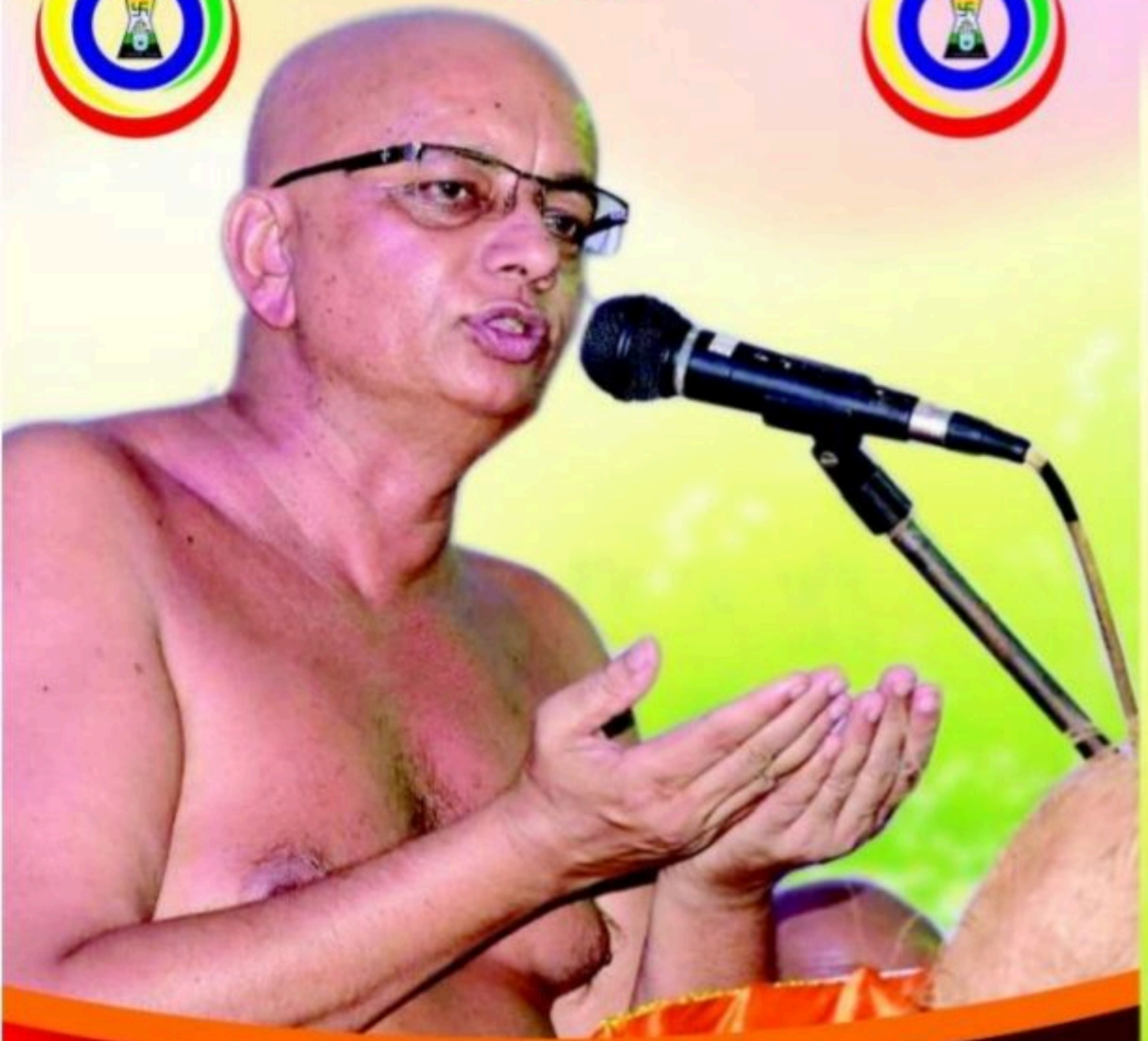

रचयिता-आचार्यश्री 108 आर्जवसागर

सम्यग्ज्ञान भूषण पदवी हेतु शिविर का आयोजन

आगम अनुयोग प्रश्नोत्तर प्रदीप

मंगल आशीर्वाद एवं प्रेरणा- आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज

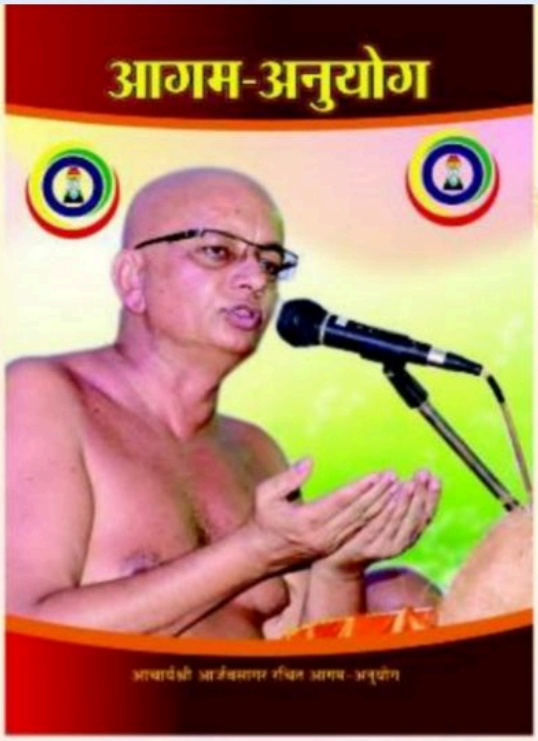

बहुमूल्य कृति : आगम-अनुयोग

'आगम-अनुयोग' एक ऐसी अनूठी, अद्वितीय (unique) कृति है; जिसमें जैन धर्म के चारों अनुयोगों का सार समाहित है। यह बहुमूल्य कृति पाठशालाओं एवं सामूहिक स्वाध्याय के लिये अत्यंत मूल्यवान एवं बहुपयोगी है। इस कृति में जैनधर्म की लोक-अलोक की विस्तृत जानकारी का समावेश है। 'आगम-अनुयोग' प्रश्नोत्तर प्रदीप कृति रूप में अत्यंत सरल शब्दों में आगम को सम्यग्ज्ञान वर्धिनी होकर कल्याणकारी रूप मोक्ष रूपी शिवालय को प्राप्त करने में नौका सदृश है।

इसके स्वाध्याय के माध्यम से भव्य लोग सम्यग्ज्ञान-भूषण सिद्धांत भूषण पदवी को भी प्राप्त कर सकते हैं।

प्रतियोगिता का उद्देश्य शास्त्र स्वाध्याय द्वारा ज्ञान के क्षयोपशम में वृद्धि करना होता है। इसलिए आगे भी ऐसे ही स्वाध्याय करते रहें और प्रतियोगिता के विजेता बनें।

दिनांक- 3 मई से 2 जून 2022 तक

आयोजक- गुरु आर्जव वाणी एवं भाव विज्ञान परिवार, भोपाल

जय जिनेंद्र
णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं
एसो पंच णमोक्कारो
सव्व पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं
पढमं हवई मंगलं

अध्याय- 9. ज्योतिषि, विमानवासी व गुणस्थानादि

प्र.828 ज्योतिषि देवों का स्वरूप क्या है?

उत्तर जिस प्रकार एक गोले के दो खण्ड करके उन्हें ऊर्ध्व मुख रखा जावे तो चौड़ाई का भाग ऊपर और गोलाई वाला सँकरा भाग नीचे रहता है। उसी प्रकार ऊर्ध्व मुख अर्द्ध गोले के सदृश ज्योतिषि देवों के विमान स्थित हैं। विमानों का मात्र नीचे का गोलाकर भाग ही हमारे द्वारा दृश्यमान होता है तथा ज्योतिषि देवों के विमान पृथ्वीकायिक होते हैं।

प्र.829 राहु-केतु के विमानों का क्या स्वरूप है? एवं सूर्य -चन्द्र ग्रहण किसे कहते हैं?

उत्तर राहु का विमान, चन्द्र विमान के नीचे और केतु का विमान, सूर्य विमान के नीचे गमन करता है। प्रत्येक छः माह के बाद पूर्णिमा और अमावस्या के अंत में राहु चन्द्रमा को और केतु सूर्य को आच्छादित करता है, इसी का नाम ग्रहण कहा जाता है।

प्र. 830 सूर्य चन्द्र आदि की किरणों का स्वरूप क्या है?

उत्तर चन्द्रमा की किरणें शीतल होती हैं; जिनका प्रमाण बारह हजार है। सूर्य की किरणें तीक्ष्ण (उष्ण) होती हैं; जिनका प्रमाण बारह हजार है। शुक्र की किरणें तीव्र प्रकाश से उज्जवल होती हैं, उनका प्रमाण ढाई हजार है। शेष ज्योतिषी देवों की किरणें मंद प्रकाश वाली हैं।

प्र.831 विसदृश प्रमाण वाली परिधियों (वीथियों) को सूर्य चन्द्र; समान काल में कैसे समाप्त (पूर्ण करते हैं?

उत्तर सूर्य और चन्द्र प्रथम वीथी में हाथीवत्, मध्यम वीथी में घोड़ेवत् और अंतिम वीथी में सिंहवत् गमन करते हैं। अर्थात् प्रथमादि वीथी से आगे जाते समय सीधी गति से एवं बाह्यादि वीथी से पीछे आते समय मन्द गति से गमन करते हैं। इस प्रकार विषम वीथियों को समान काल में पूरा कर लेते हैं।

प्र.832 ज्योतिषि देवों का गमन किस गति से होता है?

उत्तर ज्योतिषि देवों में चन्द्रमा की गति सबसे मंद है। सूर्य; चन्द्रमा की अपेक्षा शीघ्रगामी है। ग्रह; सूर्य से भी अधिक शीघ्र गामी है। नक्षत्र; ग्रह से भी अधिक शीघ्रगामी है और तारागण उससे भी अधिक शीघ्रगामी हैं। उदाहरणार्थ-

चन्द्रमा अभ्यन्तर वीथी में एक मिनिट में ४,२२,७९७ $\frac{३१}{१६४७}$ मील चलता है। अभ्यन्तर वीथी में सूर्य का एक मिनिट में ४,३७,६२३ $\frac{११}{१८}$ मील चलता है।

प्र.833 ज्योतिषि देवों के संचार (भ्रमण) से रात और दिन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के संचार से काल के विभाग रूप व्यवहार होता है। जम्बूद्वीप की वीथी के पास १८० योजन की अभ्यंतर (प्रथम) वीथी में जब सूर्य भ्रमण करता है; तब दिन अठारह मुहूर्त्त (चौदह घण्टा चौबीस मिनिट) का और रात्रि बारह मुहूर्त्त (नौ घण्टा छत्तीस मिनिट) की होती है। किन्तु जब वही सूर्य बाह्य (अंतिम) परिधि में भ्रमण करता है तब दिन १२ मुहूर्त्त का और रात्रि १८ मुहूर्त्त की होती

है। श्रावण माह में कर्क राशि पर स्थित सूर्य अभ्यंतर परिधि में भ्रमण करता है। माघ माह में मकर राशि पर स्थित सूर्य बाह्य परिधि में भ्रमण करता है। क्षेत्र की दूरी और गति की हीनाधिकता से दिन छोटे-बड़े होते हैं। भ्रमण द्वारा दो सूर्य, एक परिधि को ३० मुहूर्त्त में पूरा करते हैं।

प्र.834 दक्षिणायन- उत्तरायन किस तरह प्रारम्भ होते हैं?

उत्तर सूर्य के प्रथम वीथी में स्थित होने से दक्षिणायन का और अंतिम वीथी में स्थित होने से उत्तरायन का प्रारम्भ होता है। श्रावण माह से पौष माह तक (१८३ दिन) सूर्य दक्षिणायन तथा माघ माह से आषाढ़ माह तक (१८३ दिन) उत्तरायन रहता है।

प्र.835 युग किसे कहते हैं? और उसका प्रारम्भ कब से होता है?

उत्तर पाँच वर्ष का एक युग होता है और दक्षिणायन के प्रारम्भ से युग का प्रारम्भ होता है।

प्र.836 ढाई वर्ष में एक अधिक मास की प्राप्ति कैसे होती है?

उत्तर सूर्य गमन की गलियाँ १८४ हैं। एक गली से दूसरी गली दो-दो योजन (८००० मील) की दूरी पर हैं। एक गली से दूसरी गली में प्रवेश करता हुआ सूर्य उस मध्य के दो योजन अन्तराल को पार करते हुए जाता है। इन पूरे अंतरालों को पार करने का काल बारह योजन है क्योंकि उसका एक दिन में एक अन्तराल पार करने का काल एक मुहूर्त्त (४८ मिनिट) है। अत: एक दिन में एक मुहूर्त्त की, तीस दिन में (एक मास में) ३० मुहूर्त्त अर्थात् एक दिन की और बारह माह में बारह दिन की, ढाई वर्ष में तीस दिन (एक मास) की और पाँच वर्ष स्वरूप एक युग में दो माह की वृद्धि होती है।

प्र.837 चन्द्रमा की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर चन्द्रमा की उत्कृष्ट आयु एक लाख वर्ष अधिक एक पल्य की है।

प्र.838 सूर्य की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर सूर्य की उत्कृष्ट आयु एक हजार वर्ष अधिक एक पल्य है।

प्र.839 शुक्र की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर शुक्र की उत्कृष्ट आयु सौ वर्ष अधिक एक पल्य है।

प्र.840 गुरु की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर गुरु की उत्कृष्ट आयु एक पल्य प्रमाण है।

प्र.841 शेष ग्रहों की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर शेष ग्रहों की उत्कृष्ट आयु अर्द्ध पल्य प्रमाण है।

प्र.842 ताराओं की उत्कृष्ट आयु कितनी है?

उत्तर ताराओं की उत्कृष्ट आयु पल्य के चतुर्थ भाग प्रमाण है।

प्र.843 समस्त ज्योतिषि देवों की जघन्य आयु कितनी है?

उत्तर समस्त ज्योतिषि देवों की जघन्य आयु पल्य के आठवें भाग प्रमाण है।

प्र.844 ज्योतिष्क देवांगनाओं की आयु कितनी होती है?

उत्तर ज्योतिष्क देवांगनाओं की आयु स्व-स्व देवों की आयु के अर्द्ध भाग प्रमाण होती है। (उपर्युक्त आयु ज्योतिषि विमानों की ना होकर उनमें रहने वाले देव-देवियों की है।)

प्र.845 ज्योतिषि देवों के अवधिज्ञान का विषय कितना है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के अवधिज्ञान का विषय भवनवासी देवों के अवधिज्ञान के विषय से असंख्यात गुणा है।

प्र.846 ज्योतिषि देवों के शरीर की अवगाहना कितनी है?

उत्तर ज्योतिषि देवों के शरीर की अवगाहना (ऊँचाई) सात धनुष प्रमाण है।
(ज्योतिषि देवों के भेद आदि का वर्णन देखें- जैनागम संस्कार, अ.13, पृ.125)

प्र.847 ज्योतिष्क देवों के विमानों संबंधी अकृत्रिम चैत्यालयों का प्रमाण कितना है?

उत्तर ज्योतिष्क देवों के विमान असंख्यात हैं और सभी विमानों में एक-एक अकृत्रिम जिनालय स्थित हैं। अत: उनकी संख्या असंख्यात है। (स्वर्गादिक में रहने वाले वैमानिक देवों के भेद आदि का वर्णन देखें- जै.सं., अ.-13, पृ.127)

प्र.848 मध्यलोक से स्वर्ग विमान कितने ऊपर हैं?

उत्तर सुदर्शन मेरु पर्वत (एक लाख चालीस योजन प्रमाण वाला मध्यलोक में स्थित है; ऐसे सुमेरु पर्वत) की चूलिका से उत्तम भोगभूमिज मनुष्य के एक बाल की मोटाई प्रमाण ऊपर से स्वर्ग विमान का प्रारम्भ है।

प्र.849 स्वर्गों की सौधर्म आदि संज्ञा (नाम) क्यों है?

उत्तर स्वर्गों में सुधर्मा नामक सभा इत्यादिक के साहचर्य से सौधर्म स्वर्ग एवं शेष इन्द्रों के नाम के साहचर्य से स्वर्गों के उपर्युक्त नाम प्रचलित हैं।

प्र.850 ग्रैवेयक यह संज्ञा क्यों है?

उत्तर लोकाकाश को पुरुषाकार माना है, उस लोक रूप पुरुष के ग्रीवा-स्थानीय भाग में होने वाले विमानों को ग्रैवेयक विमान कहते हैं।

प्र.851 स्वर्गों में, स्वर्ग विमान कितने विस्तार वाले हैं?

उत्तर स्वर्गों में इन्द्रक विमान संख्यात योजन विस्तार वाले हैं। श्रेणीवत् विमान असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं और प्रकीर्णक विमानों में, कुछ संख्यात योजन विस्तार वाले और कुछ असंख्यात योजन विस्तार वाले हैं।

प्र.852 वैमानिक देवों संबंधी पटलों की संख्या कितनी है?

उत्तर वैमानिक देवों संबंधी पटलों की संख्या त्रेसठ (६३) है।

प्र.853 वैमानिक देवों के इन्द्रक विमान कितने हैं? और वे कहाँ-कहाँ स्थित हैं?

उत्तर एक-एक पटल में एक-एक ही इन्द्रक विमान होने से इन्द्रक विमानों की संख्या भी त्रेसठ (६३) ही है।

सौधर्म युगल में इक्तीस (३१) इन्द्रक, सानतकुमार युगल में सात (७) इन्द्रक, ब्रह्म युगल में चार (४) इन्द्रक, लान्तव युगल में दो (२) इन्द्रक, शुक्र युगल में एक (१) इन्द्रक, शतार युगल में एक (१) इन्द्रक, आनत आदि चार स्वर्गों में छः (६) इन्द्रक, तीन अधस्तन ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। तीन मध्यम ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। तीन उपरिम ग्रैवेयकों में तीन (३) इन्द्रक हैं। नौ अनुदिशों में एक (१) इन्द्रक है, पाँच अनुत्तरों में एक (१) इन्द्रक विमान है।

प्र.854 स्वर्गादिक में रहने वाले वैमानिक देवों के श्रेणीबद्ध विमान किस तरह स्थित हैं?

उत्तर पैंतालीस लाख योजन प्रमाण विस्तार वाले (मनुष्य क्षेत्र के समान प्रमाण वाले) प्रथम ऋतु नामक इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में बासठ-बासठ श्रेणीबद्ध विमान हैं। इसके आगे दूसरे, तीसरे, चौथे आदि इन्द्रकों में वे उत्तरोत्तर एक-एक कम (इकसठ, साठ, उन्सठ) आदि होते हुये अनुदिश और अनुत्तर इन्द्रक विमानों की चारों दिशाओं में मात्र एक-एक ही विमान अवशेष रहते हैं। एक लाख योजन प्रमाण विस्तार वाले (जम्बूद्वीप समान प्रमाण वाले) अंतिम सर्वार्थसिद्धि नामक इन्द्रक विमान की चारों दिशाओं में एक-एक श्रेणीबद्ध विमान है।

(प्रथम कल्प से लेकर नवग्रैवेयक तक प्रकीर्णक विमान भी अनेक संख्या में बिखरे हुये हैं।)

प्र.855 सौधर्म कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सौधर्म कल्प में इन्द्रक आदि (इन्द्रक, श्रेणीबद्ध, प्रकीर्णक) विमान बत्तीस लाख हैं।

प्र.856 ईशान कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं ?

उत्तर ईशान कल्प में इन्द्रक आदि अट्ठाईस लाख विमान हैं।

प्र.857 सानतकुमार कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सानतकुमार कल्प में इन्द्रक आदि विमान बारह लाख हैं।

प्र.858 माहेन्द्र कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर माहेन्द्र कल्प में इन्द्रक आदि आठ लाख विमान हैं।

प्र.859 ब्रह्म कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर ब्रह्म कल्प में इन्द्रक आदि चार लाख विमान हैं।

प्र.860 लान्तव कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर लान्तव कल्प में इन्द्रक आदि पचास हजार विमान हैं।

प्र.861 महाशुक्र कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर महाशुक्र कल्प में इन्द्रक आदि चालीस हजार विमान हैं।

प्र.862 सहस्रार कल्प में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर सहस्रार कल्प में इन्द्रक आदि छः हजार विमान हैं।

प्र.863 आनत आदि कल्पों में इन्द्रक आदि कितने विमान हैं?

उत्तर आनत आदि कल्पों में इन्द्रक आदि सात सौ विमान हैं।

प्र.864 अधस्तन तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं।

उत्तर अधस्तन तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान एक सौ ग्यारह हैं।

प्र.865 मध्यम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर मध्यम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान एक सौ सात हैं।

प्र.866 उपरिम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर उपरिम तीन ग्रैवेयकों में इन्द्रक आदि विमान इक्यानवै हैं।

प्र.867 अनुदिशों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर अनुदिशों में इन्द्रक आदि विमान नौ हैं।

प्र.868 अनुत्तरों में इन्द्रक आदि विमान कितने हैं?

उत्तर अनुत्तरों में इन्द्रक आदि विमान पाँच हैं।

प्र.869 स्वर्गादिक के संपूर्ण विमान किस आधार पर अवस्थित हैं?

उत्तर सौधर्म-ईशान कल्प के विमान जल के ऊपर अवस्थित हैं। सानत कुमार माहेन्द्र कल्पों के विमान वायु के ऊपर अवस्थित हैं। ब्रह्म स्वर्ग से लेकर सहस्रार स्वर्ग तक के विमान जल और वायु के ऊपर अवस्थित हैं। और आनतादि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त के सभी विमान शुद्ध आकाश तक अवस्थित हैं। (क.दी. भाग-3, पृ.43)

प्र.870 सौधर्म आदि कल्पों में विमानों का वर्णन किस तरह है?

उत्तर सौधर्म और ईशान कल्प के स्वर्ग विमान पाँचों वर्ण वाले हैं। तथा सानतकुमारादि युगल के विमान कृष्ण वर्ण से रहित शेष चार वर्ण वाले हैं।

प्र.871 ब्रह्म और लान्तव कल्प में विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर ब्रह्म और लान्तव कल्पों के विमान कृष्ण एवं नील वर्ण से रहित शेष तीन वर्ण वाले हैं।

प्र.872 महाशुक्र और सहस्रार कल्पों के विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर महाशुक्र और सहस्रार कल्पों में विमान कृष्ण, नील, रक्त रहित दो वर्ण वाले हैं।

प्र.873 आनतादि विमान किस वर्ण वाले हैं?

उत्तर आनतादि से लेकर अनुत्तर पर्यन्त सभी विमान कृष्ण, नील, रक्त (लाल) एवं पीत वर्ण से रहित होते हैं; मात्र शुक्ल वर्ण वाले हैं।

प्र.874 स्वर्गों में स्थित मानस्तंभ कहाँ और किस तरह के होते हैं?

उत्तर इन्द्रों के सभा-मण्डप के आगे एक योजन विस्तीर्ण, छत्तीस योजन ऊँचा, पाद-पीठ से युक्त वज्रमय मानस्तंभ होता है। इसका आकार गोल और व्यास एक योजन का होता है। और इसमें एक-एक कोश विस्तार वाली बारह धाराएँ होती हैं तथा उन मानस्तंभों पर तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित करण्डक स्थित होते हैं।

प्र.875 कौन-से क्षेत्र के तीर्थंकरों के आभरणों से कौन से मानस्तंभों के करण्डक पूरित होते हैं?

उत्तर सौधर्म स्वर्ग में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक भरत क्षेत्र संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं। ईशान स्वर्ग में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक ऐरावत क्षेत्र संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं। सानतकुमार और माहेन्द्र कल्प में स्थित मानस्तंभों पर स्थित करण्डक क्रमशः पूर्व विदेह संबंधी और पश्चिम विदेह संबंधी तीर्थंकरों के आभरणों से पूरित होते हैं।

प्र.876 स्वर्ग के इन्द्र आदि देवों का और देवांगनाओं का उत्पत्ति स्थान कहाँ पर है?

उत्तर मानस्तंभ के समीप इन्द्र का उत्पाद गृह आठ योजन लम्बा, चौड़ा और ऊँचा है। उसके मध्य में रत्नों की दो शय्यायें हैं। आरण स्वर्ग पर्यंत दक्षिण कल्पों की समस्त देवांगनाएँ सौधर्म कल्प में और अच्युत स्वर्ग पर्यंत उत्तर कल्पों की समस्त देवांगनाएँ ऐशान कल्प में ही उत्पन्न होती हैं। उत्पत्ति के बाद उपरिम कल्पों के देव अपनीअपनी देवांगनाओं को अपने- अपने स्थान पर ले जाते हैं।

प्र.877 सौधर्म-ऐशान स्वर्गों में कितने-कितने विमानों में देव और देवांगनाओं की उत्पत्ति होती है?

उत्तर सौधर्म-स्वर्ग में छः लाख विमान और ऐशान स्वर्ग में चार लाख विमान शुद्ध विमान हैं; जहाँ मात्र देवांगनाओं की ही उत्पत्ति होती है। इन्हीं स्वर्गों में क्रम से छब्बीस लाख और चौबीस लाख विमानों में देव और देवांगनाओं दोनों की उत्पत्ति होती है। देवांगनाएँ मूल शरीर के साथ ही अपने नियोगी देवों के साथ जाती हैं।

प्र.878 स्वर्गादिक में देव पर्याय में जन्म लेने के बाद किस प्रकार का वातावरण देखा जाता है?

उत्तर स्वर्गादिक में देव उत्पत्ति के समय वहाँ स्थित देवगण आनंद वाद्य बजाते हैं, जय-जय के अनेक स्तुतियों के शब्द करते हैं। उन शब्दों को सुनकर प्राप्त हुये वैभव और अपने परिवार को देखकर तथा अवधिज्ञान से अपने पूर्वजन्म को ज्ञात कर वे नवीन देव धर्म की प्रशंसा करते हैं तथा परम स्नान करने के बाद पट्ट रूप अभिषेक इत्यादि एवं अलंकारों को प्राप्त कर सम्यग्दृष्टि देव स्वयं जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक पूजन करते हैं तथा मिथ्यादृष्टि देव अन्य देव द्वारा सम्बोधे जाने के उपरांत, ये कुल देवता हैं; ऐसा मानकर जिनेन्द्र पूजन करते हैं। ये सभी देव सुखसागर में निमग्न होने के कारण अपने व्यतीत हुये काल को नहीं जान पाते।

प्र.879 कल्पवासी देव धार्मिक अनुष्ठानों में किस तरह मध्यलोक में आक करते हैं?

129 / 196

उत्तर कल्पवासी देव तीर्थंकरों की महापूजा और उनके पञ्चकल्याणक महोत्सवों में जाते हैं किन्तु अहमिन्द्र देव तो अपने ही स्थान पर स्थित रहकर मणिमय मुकुटों पर अपने हाथों को मुकलित रूप में जोड़कर नमस्कार करते हैं। वे इन्द्र गर्भ और जन्मादि कल्याणकों में उत्तर शरीर से ही जाया करते हैं और उनके मूल शरीर तो सुख पूर्वक जन्म स्थानों में ही स्थित रहते हैं।

प्र.880 इन्द्रभवनों के सामने जिनेन्द्र देव के दर्शन हेतु क्या व्यवस्था होती है?

उत्तर समस्त इन्द्र भवनों के आगे न्यग्रोध वृक्ष होते हैं, इनमें एक-एक वृक्ष पृथ्वीकायिक और जम्बूवृक्ष के सदृश होते हैं। इसके मूल (मध्य) में प्रत्येक दिशा में एक-एक जिनेन्द्र प्रतिमा होती है, जिनके

चरणों में इन्द्रादिक प्रणाम करते हैं, पूजन करते हैं तथा जो प्रतिमायें स्मरण मात्र से ही पाप को हरने वाली होती हैं।

प्र.881 सौधर्म-ईशान आदि इन्द्रों की एक-एक प्रधान देवी की कितनी परिवार (सहयोगी) देवियाँ होती हैं?

उत्तर सौधर्म-ऐशान संबंधी सोलह हजार, सानतकुमार-माहेन्द्र संबंधी आठ हजार, ब्रह्मेन्द्र संबंधी चार हजार, लान्तव इन्द्र संबंधी दो हजार, महाशुक्र इन्द्र संबंधी एक हजार, सहस्रार इन्द्र संबंधी पाँच सौ, आनत आदि चार इन्द्र संबंधी ढाई सौ सहयोगी देवियाँ होती हैं।

प्र.882 वैमानिक देवों के आहार संबंधी नियम क्या है?

उत्तर एक सागरोपम काल पर्यन्त आयु वाले देवों का दिव्य अमृतमय आहार एक हजार वर्ष में संपन्न होता है। इसी तरह जितने सागरोपम हों उतने हजार वर्ष में आहार का नियम जानना चाहिए।

प्र.883 देवगति में एक भवावतारी कौन-कौन सी भव्य आत्मायें हैं?

उत्तर देवगति में एक भवावतारी निकट भव्यात्माएँ सौधर्म इन्द्र, शचि देवी, लोकपाल (सोम, यम, वरुण और धनद-कुबेर), सानत कुमारादि दक्षिणेन्द्र, लौकान्तिक देवर्षि और सर्वार्थसिद्धि विमान में उत्पन्न होने वाले सर्वदेव अपने-अपने स्थान से आकर चतुर्थ युग संबंधी मनुष्य भव प्राप्त कर निर्ग्रंथ मुनि बन उसी पर्याय से निर्वाण को प्राप्त करते हैं।

प्र.884 वैमानिक देवों में सम्यग्दर्शन संबंधी क्या नियम है?

उत्तर वैमानिक देवों में पर्याप्त और अपर्याप्त अवस्था में औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन हो सकता है। अपर्याप्त अवस्था में औपशमिक सम्यग्दर्शन; द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन के साथ मरने वाले जीवों की अपेक्षा घटित होता है। देवांगनाओं के अपर्याप्त अवस्था में एक भी सम्यग्दर्शन नहीं होता। पर्याप्त अवस्था में नवीन उत्पत्ति की अपेक्षा औपशमिक और क्षायोपशमिक ये दो सम्यग्दर्शन हो सकते हैं।

प्र.885 मिथ्या दृष्टि जीव देव पर्याय में कहाँ तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर मिथ्यादृष्टि जीव का उत्पाद नवम ग्रैवेयक तक हो सकता है।

प्र.886 अनुदिश और अनुत्तर विमानों में सम्यग्दर्शन का क्या नियम है?

उत्तर नौ अनुदिश और पाँच अनुत्तर विमानों में सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्पन्न होते हैं।

प्र.887 वैमानिक देवों के अवधिज्ञान का विषय क्षेत्र कितना है?

उत्तर सौधर्म-ऐशान कल्प के देव अपने अवधिज्ञान से नरक संबंधी प्रथम पृथ्वी पर्यन्त, सानतकुमार-माहेन्द्र कल्प के देव दूसरी पृथ्वी पर्यन्त, ब्रह्मादि चार स्वर्गों के देव तृतीय पृथ्वी पर्यन्त, शुक्र आदि चार स्वर्गों के देव चतुर्थ पृथ्वी पर्यन्त, आनत आदि चार स्वर्गों के देव पाँचवी पृथ्वी पर्यन्त, नौ ग्रैवेयक वासी देव छठी पृथ्वी पर्यन्त और अनुदिश एवं अनुत्तर वासी देव संपूर्ण लोक नाड़ी को देखते हैं। प्रत्येक वैमानिक देव अपने-अपने विमान के ध्वजदण्ड से ऊपर के क्षेत्र की बात नहीं जान

सकते।

प्र.888 वैमानिक देवों की विक्रिया का क्षेत्र कितना है?

उत्तर वैमानिक देवों की विक्रिया का क्षेत्र उनके अवधिज्ञान क्षेत्र प्रमाण है।

प्र.889 देवगति में देवों की लेश्या का आगमानुसार वर्णन किस प्रकार है?

उत्तर भवनत्रिक (भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिष्क) देवों की अपर्याप्त अवस्था में कृष्ण, नील, कापोत तीन अशुभ लेश्यायें हैं और पर्याप्त अवस्था में पीत लेश्या का जघन्य अंश होता है।

वैमानिक देवों की पर्याप्त-अपर्याप्त अवस्था में शुभ लेश्या ही होती हैं। जिनमें सौधर्म-ऐशान स्वर्ग में मध्यम पीत लेश्या, सानत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग में उत्कृष्ट पीत एवं जघन्य पद्मलेश्या, ब्रह्मादि छ:स्वर्गों में मध्यम पद्म लेश्या, शतार-सहस्रार स्वर्गों में उत्कृष्ट पद्म एवं जघन्य शुक्ल लेश्या, आनत आदि चार स्वर्गों में मध्यम शुक्ल लेश्या, ९ ग्रैवेयक में मध्यम शुक्ल लेश्या एवं ९ अनुदिश तथा ५ अनुत्तर में उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या होती है।

प्र.890 स्वर्गों में देवांगनाओं की उत्कृष्ट एवं जघन्य आयु कितनी है?

उत्तर स्वर्गों में देवांगनाओं की जघन्य आयु कुछ कम एक पल्य एवं उत्कृष्ट आयु पचपन पल्य प्रमाण होती है।

प्र.891 घातायुष्क किसे कहते हैं? और वह कहाँ तक होता है?

उत्तर जो देव अधिक स्थिति बाँधकर पश्चात् संक्लेश परिणामों के निमित्त अध:स्तन स्वर्गों में उत्पन्न होते हैं, उनके इस उत्पन्न होने को घातायुष्क कहते हैं। ऐसे देवों की उत्पत्ति शतार-सहस्रार स्वर्गों तक ही होती है। आगे के स्वर्गों में उनकी उत्पत्ति नहीं होती, इस कारण आयु के साथ कुछ अधिक का संबंध शतार-सहस्रार स्वर्ग तक ही होता है।

प्र.892 देवों में घातायुष्क की व्यवस्था का उदाहरण किस तरह घटित होता है?

उत्तर मान लीजिए किसी मनुष्य ने अपनी संयम अवस्था में अच्युत कल्प में 22 सागरोपम प्रमाण आयु का बंध किया। पश्चात् संयम की विराधना और बाँधी हुई आयु की अपवर्तना कर असंयत सम्यग्दृष्टि हो गया। पश्चात् मरण कर यदि सहस्रार कल्प में उत्पन्न हुआ तो वहाँ की साधारण आयु; जो अठारह सागरोपम ही है, उससे घातायुष्क संबंधी देव की आयु अंतर्मुहूर्त्त कम अर्द्धसागर अधिक होगी। यदि वही पुरुष संयम की विराधना के साथ ही सम्यक्त्व की विराधना कर मिथ्यादृष्टि हो जाता है और पश्चात् मरण कर उसी सहस्रार कल्प में उत्पन्न होता है तो उसकी आयु वहाँ की निश्चित अठारह सागर की आयु से पल्य के असंख्यातवें भाग से अधिक होगी। ऐसे जीव को घातायुष्क मिथ्यादृष्टि कहते हैं। (क.दी.भाग-3)

प्र.893 कौन-से जीव वैमानिक देवों में कहाँ तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर असंयत सम्यग्दृष्टि और देशसंयमी मनुष्य और तिर्यंच सोलहवें स्वर्ग तक उत्पन्न हो सकते हैं। जो मुनि द्रव्य से (शारीरिक बाहरी मुद्रा से) निर्ग्रन्थ अवस्था के धारक हैं और भाव से वे मिथ्यादृष्टि हुये

हों अथवा वे मुनि असंयत सम्यग्दृष्टि हुये हों अथवा वे मुनि देशसंयमी हुये हों अर्थात् उन मुनि का गुणस्थान पहला या चौथा या पंचम हो गया है ऐसे वे मुनि अंतिम ग्रैवेयक पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं। सम्यग्दृष्टि महाव्रती मुनि सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं। सम्यग्दृष्टि भोगभूमिज मनुष्य व तिर्यञ्च सौधर्म-ऐशान स्वर्ग पर्यन्त उत्पन्न हो सकते हैं और मिथ्यादृष्टि भोगभूमिज मनुष्य व तिर्यञ्च एवं तापसी (अन्यमती) साधु उत्कृष्टता से भवनत्रिक पर्यन्त ही उत्पन्न हो सकते हैं। चरक और परिव्राजक संन्यासी ब्रह्म कल्प (स्वर्ग) पर्यन्त और आजीवक साधु अच्युत कल्प तक उत्पन्न हो सकते हैं। अर्थात् अन्य लिंगियों का (जैन मत से भिन्न भेषधारियों का) उत्पाद सोलहवें स्वर्ग से आगे नहीं होता तथा स्त्रियों का उत्पाद भी सोलहवें स्वर्ग तक ही हो सकता है।

प्र.894 वैमानिक देवों की सामर्थ्य (शक्ति) कितनी होती है?

उत्तर वैमानिक देवों में एक पल्योपम प्रमाण आयु वाला देव पृथ्वी के छः खण्डों को उखाड़ने में, उनमें स्थित मनुष्यों-तिर्यञ्चों का हनन और पोषण करने में समर्थ होता है। और सागरोपम प्रमाण काल पर्यन्त जीवित रहने वाला देव जम्बूद्वीप को पलटने और उसमें स्थित मनुष्य और तिर्यञ्चों का हनन और पोषण करने में समर्थ होता है।

प्र.895 देवगति के किन देवों का जन्म तिर्यञ्चों की एकेन्द्रिय पर्याय में हो सकता है?

उत्तर देवगति के ईशान स्वर्ग पर्यन्त देवों का जन्म एकेन्द्रिय पर्याय में हो सकता है।

प्र.896 देवगति के कौन-से देव संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याय में ही उत्पन्न होते हैं?

उत्तर देवगति के सानतकुमार स्वर्ग से लेकर सहस्रार स्वर्ग पर्यन्त के देव संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य व तिर्यञ्च ही होते हैं।

प्र.897 तिर्यञ्च पर्याय में कौन-से देव उत्पन्न नहीं होते हैं?

उत्तर तिर्यञ्च पर्याय में तेरहवे स्वर्ग से लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त देव उत्पन्न नहीं होते हैं। अर्थात् वे शुक्ल लेश्या के साथ मनुष्य में ही उत्पन्न होते हैं।

प्र.898 देवगति के देव क्या भोगभूमि में उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर नहीं! देवगति के देव मरण कर भोगभूमि में उत्पन्न नहीं हो सकते हैं।

प्र.899 सर्वार्थसिद्धि विमान से ईषत् प्राग्भार पृथ्वी (सिद्धशिला) कितने ऊपर स्थित है?

उत्तर सर्वार्थसिद्धि के इन्द्रक विमान के ध्वजदण्ड से बारह योजन प्रमाण ऊपर जाकर कोई ईषत् प्राग्भार नामक आठवीं पृथ्वी अवस्थित है।

प्र.900 इषत् प्राग्भार नामक पृथ्वी से कितने ऊपर जाकर सिद्धों का निवास है?

उत्तर ईषत् प्राग्भार नामक पृथ्वी से ऊपर सात हजार पचास धनुष जाकर सिद्धों का निवास है। अर्थात् अष्टम पृथ्वी से ऊपर लोक के अन्त में चार हजार धनुष मोटा घनोदधि वातवलय है, दो हजार धनुष मोटा घनवातवलय है, और १५७५ धनुष मोटा तनुवातवलय है। सिद्ध परमेष्ठी तनुवातवलय में रहते हैं, इनकी उत्कृष्ट अवगाहना ५२५ धनुष है। वातवलयों के प्रमाण से उत्कृष्ट अवगाहना घटा देने पर

अष्टम पृथ्वी से कितने योजन ऊपर सिद्धों का निवास है यह प्रमाण प्राप्त हो जाता है।

प्र.901 सिद्धों के निवास क्षेत्र के व्यास का प्रमाण कितना है?

उत्तर सिद्धों के निवास क्षेत्र के व्यास का प्रमाण मनुष्य लोक के समान पैंतालीस लाख योजन है।

प्र.902 सिद्धों की अवगाहना कितनी होती है?

उत्तर सिद्धों के आत्मप्रदेशों की अवगाहना अंतिम शरीर से किञ्चित् न्यून होकर पाँच सौ पच्चीस धनुष उत्कृष्ट, साढ़े तीन हाथ जघन्य और मध्यम अनेक प्रकार की अवगाहना यथायोग्य रूप से होती है।

प्र.903 सिद्धों का सुख कैसा और कितना अनुपम होता है?

उत्तर संसार में चक्रवर्तियों के सुख से भोगभूमि स्थित जीवों का सुख अनंतगुणा है। भोगभूमिज जीवों से धरणेन्द्र का सुख अनंतगुणा है। धरणेन्द्र से स्वर्गिज देवेन्द्रों का सुख अनंतगुणा है। स्वर्गिज देवेन्द्रों से अहमिन्द्र का सुख अनंतगुणा है। अहमिन्द्रों या इन सबके त्रिकालवर्ती सुख से भी सिद्धों का एक क्षण का सुख अनंतगुणा है अर्थात् उनके सुख की कोई तुलना या उपमा नहीं है वह अतिशय-अनुपम है।

प्र.904 सुख कितने प्रकार का होता है?

उत्तर सुख मुख्यत: दो प्रकार का होता है- एक अभ्युदय और एक मोक्ष।

प्र.905 अभ्युदय सुख किसे कहते हैं?

उत्तर स्वर्गिक या चक्रवर्ती आदि राजाओं के सुख को अभ्युदय का सुख कहते हैं।

प्र.906 मोक्ष सुख किसे कहते हैं?

उत्तर अतीन्द्रिय अनंत आत्मिक सुख को मोक्ष सुख कहते हैं।

प्र.907 संक्षेप और ओघ किसे कहते हैं?

उत्तर संक्षेप और ओघ यह गुणस्थान की संज्ञा (नाम) है।

प्र.908 गुणस्थान कैसे उत्पन्न होते हैं?

उत्तर गुणस्थान मोह तथा योग से उत्पन्न होते हैं।

प्र.909 विस्तार तथा आदेश किसे कहते हैं?

उत्तर विस्तार तथा आदेश ये मार्गणा की संज्ञा हैं।

प्र.910 मार्गणा कैसे उत्पन्न होती हैं?

उत्तर मार्गणा अपने-अपने योग्य कर्मों के उदय आदि से उत्पन्न होती हैं।

प्र.911 सामान्य और विशेष किसे कहते हैं?

उत्तर एक अपेक्षा से गुणस्थान की सामान्य और मार्गणा की विशेष संज्ञा है। (गुणस्थानों का वर्णन देखिये जै.सं.अ.-१८ पृ. १८१)

प्र.912 प्ररूपणा किसे कहते हैं?

उत्तर चौदह गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, मार्गणा और उपयोग का जिसमें प्ररूपण किया

जाये उसे बीस प्ररूपणा कहते हैं। [प्ररूपणाओं के साथ ध्यान, आश्रव, जाति और कुलकोटि को मिला देने से चौबीस ठाना कहलाते हैं। आश्रव एवं ध्यान का वर्णन आगे अनुयोगों में किया जावेगा।]

प्र.913 प्रथम गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर प्रथम गुणस्थान में (कर्म के उदय से होने वाले) औदयिक भाव होते हैं। (गो.जी.का.११)

प्र.914 द्वितीय गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर द्वितीय गुणस्थान में कर्म निरपेक्ष पारिणामिक भाव होते हैं।

प्र.915 मिश्र गुणस्थान में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर मिश्र गुणस्थान में कर्म के क्षयोपशम से होने वाले क्षायोपशमिक भाव होते हैं।

प्र.916 चतुर्थ गुणस्थान में कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर चतुर्थ गुणस्थान में कर्म के उपशम से होने वाले औपशमिक, कर्म के क्षय से होने वाले क्षायिक और कर्म के क्षयोपशम से होने वाले क्षायोपशमिक इस प्रकार ये तीन भाव होते हैं।

प्र.917 कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाले देशविरत, प्रमत्तविरत, अप्रमत्तविरत इन गुणस्थानों में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर इन तीनों गुणस्थानों में चारित्रमोहनीय की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव होते हैं।

प्र.918 अप्रमत्त विरत से ऊपर अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और उपशांत मोह इन गुणस्थानों में कौन से भाव होते हैं?

उत्तर इन 8 वें, 9 वें, 10 वें और 11 वें गुणस्थानों में (उपशम श्रेणी में) चारित्र मोहनीय कर्म के उपशम की अपेक्षा औपशमिक भाव ही होते हैं।

प्र.919 अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और क्षीणमोह इन गुणस्थानों में कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर इन चार गुणस्थानों में (क्षपक श्रेणी में) चारित्र मोहनीय के क्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव होते हैं।

प्र.920 सयोगकेवली, अयोग केवली और सिद्धों की अपेक्षा कौन-से भाव होते हैं?

उत्तर इन अवस्थाओं में कर्मक्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव होते हैं।

प्र.921 गुणस्थानों में औदयिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-उदय की अपेक्षा औदयिक भाव प्रथम गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.922 गुणस्थानों में क्षायोपशमिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-क्षयोपशम की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव प्रथम गुणस्थान से बारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.923 गुणस्थानों में क्षायिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म-क्षय की अपेक्षा क्षायिक भाव चतुर्थ गुणस्थान से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक तथा गुणस्थानीत सिद्धों में भी पाये जाते हैं।

प्र.924 गुणस्थानों में औपशमिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्म उपशम की अपेक्षा औपशमिक भाव चतुर्थ गुणस्थान से लेकर ग्यारहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.925 गुणस्थानों में पारिणामिक भाव कहाँ तक पाये जाते हैं?

उत्तर गुणस्थानों में कर्मनिरपेक्ष पारिणामिक भावों में से जीवत्व और अभव्यत्व भाव मात्र प्रथम गुणस्थान तक, जीवत्व और भव्यत्व भाव चौदहवें गुणस्थान तक पाये जाते हैं।

प्र.926 सिद्धों में कौन-सा पारिणामिक भाव पाया जाता है?

उत्तर सिद्धों में कर्म-निरपेक्ष पारिणामिक भावों में से मात्र, जीवत्व-भाव पाया जाता है। (गो.क.का.गा. ८२१)

प्र.927 किसी मत में सिद्धों के जीवत्व भाव क्यों नहीं माना गया? और आगम से कैसे माना गया है?

उत्तर किसी मत से द्रव्य रूप दस प्राणों के अभाव में सिद्धों के जीवत्व भाव को स्वीकार नहीं किया गया है परंतु आगम में सिद्धों के ज्ञान-दर्शन रूप भाव प्राणों का सद्भाव होने से जीवत्व रूप पारिणामिक भाव को स्वीकार किया गया है। अर्थात् मुख्य नय से भी सिद्ध भगवान जीव हैं। इसमें कोई दोष नहीं है, क्योंकि ज्ञान-दर्शन रूप भाव प्राणों का अनुभव करने से वर्तमान में भी जीवत्व से युक्त हैं।

प्र.928 मिथ्यादृष्टि जीव के श्रद्धान में विपरीतता किस तरह की होती है?

उत्तर मिथ्यादृष्टि जीव समीचीन गुरुओं के पूर्वापर विरोधादि दोषों से रहित और हित के करने वाले वचनों का भी यथार्थ श्रद्धान नहीं करता। किन्तु इसके विपरीत आचार्याभासों (मिथ्या आचार्यों) के द्वारा उपदिष्ट या अनुपदिष्ट असद्भाव का अर्थात् पदार्थ के विपरीत स्वरूप का इच्छानुसार श्रद्धान करता है। (गो.सा.जी.का.गा.१८)

प्र.929 मिथ्यादृष्टि के कितने भेद हैं?

उत्तर मिथ्यादृष्टि के दो भेद हैं। 1. स्वस्थान मिथ्यादृष्टि 2. सातिशय मिथ्यादृष्टि। जो जीव मिथ्यात्व में लवलीन है उसे स्वस्थान मिथ्यादृष्टि कहते हैं। सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव के जो अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम होते हैं उससे युक्त जीव को सातिशय मिथ्यादृष्टि कहते हैं। (क.दी.भा-१)

प्र.930 अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणाम किस तरह के होते हैं?

उत्तर जहाँ सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणामों से समान और असमान दोनों तरह के हों उसे अधःप्रवृत्तकरण, जहाँ सम-समयवर्ती जीवों के परिणाम समान और असमान दोनों तरह के और भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणाम असमान ही हों उसे अपूर्वकरण तथा जहाँ एक समयवर्ती अनेक जीवों के परिणामों में (विशुद्धि की अपेक्षा) निवृत्ति-भेद नहीं पाया जावे, परन्तु

भिन्न समयवर्ती जीवों के परिणामों में सर्वथा भेद ही पाया जावे उसे अनिवृत्तिकरण जानना चाहिए।

प्र.931 जीव को सासादन गुणस्थान कब प्राप्त होता है?

उत्तर प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के अंतमुहूर्त्त मात्र काल में से जब जघन्य एक समय तथा उत्कृष्ट छ: आवली प्रमाण काल शेष रहे, उतने काल में अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से किसी के भी उदय में आने से सम्यक्त्व की विराधना होने पर सम्यग्दर्शन की जो अव्यक्त अतत्व-श्रद्धान रूप परिणति होती है, उसे सासादन गुणस्थान कहते हैं। अथवा अनंतानुबंधी कषाय में से किसी एक का उदय आने पर सम्यक्त्व परिणामों के छूटने पर और मिथ्यात्व प्रकृति का उदय न होने से, मिथ्यात्व परिणाम न होने पर मध्य के काल में जो परिणाम होते हैं उसे सासादान गुणस्थान कहते हैं। (क.दी.भा-१)

प्र.932 चारित्रमोहनीय के भेद रूप अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यक्त्व का घात कैसे करती है?

उत्तर अनन्तानुबन्धी कषाय में सम्यक्त्व और चारित्र दोनों के घात करने का स्वभाव है अर्थात् वह द्वि-स्वभाव वाली है। यह कषाय सम्यक्त्व का घात भी करती है और अप्रत्याखनावरणादि कषायों का अनन्त प्रवाह भी बनाये रखती है, इस तरह अनन्तानुबन्धी कषाय का द्विस्वभावपना सिद्ध होने से सासादान गुणस्थान की पृथक् सिद्धि होती है।

प्र.933 सम्यग्मिथ्यात्व (मिश्र) गुणस्थानवर्ती जीव द्वारा प्राप्ति के अयोग्य स्थान कौन-से हैं?

उत्तर मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव सकलसंयम या देशसंयम को धारण नहीं कर सकता। मिश्र गुणस्थान में नवीन आयु का बंध नहीं होता तथा मिश्र गुणस्थानवर्ती का मारणान्तिक समुद्घात और मरण भी नहीं होता है।

प्र.935 असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान में श्रद्धान की अपेक्षा क्या विशेषता है?

उत्तर सम्यग्दृष्टि जीव आचार्यों के द्वारा उपदिष्ट प्रवचन का श्रद्धान करता है किन्तु स्वयं के अज्ञानवश गुरु के उपदेश से, विपरीत अर्थ का भी श्रद्धान कर लेता है, तो भी वह सम्यग्दृष्टि ही है।

सूत्र के आश्रय से आचार्यादि के द्वारा आगम दिखाकर समीचीन पदार्थ के समझाने पर भी यदि वह जीव पूर्व में अज्ञान से किये हुए अतत्त्व श्रद्धान को न छोड़े तो वह जीव उसी काल से मिथ्यादृष्टि कहा जाता है। (गो.सा.जी.का.गा.२७, २८)

प्र.935 क्षायोपशमिक या वेदक सम्यग्दर्शन के प्रकरण में जो उदयाभावीक्षय कहा जाता है, उसका अर्थ क्या है?

उत्तर उदयाभावी क्षय का अर्थ है कि बिना फल दिये ही सर्वघाति (अनन्तानुबंधी चतुष्क, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व) प्रकृतियों के वर्तमान निषेकों की बिना फल दिये ही निर्जरा होना है।

प्र.936 प्रमाद के पन्द्रह भेद कौन-से होते हैं?

उत्तर चार विकथाएँ-स्त्रीकथा, भक्त (भोजन) कथा, राष्ट्रकथा, अवनिपाल (राजा) कथा। चारकषाएँ-क्रोध, मान, माया, लोभ। पंचइन्द्रिय-स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र। एक निद्रा (पांच निद्राओं में

से कोई एक)। एक प्रणय (स्नेह) इस तरह कुल पन्द्रह- प्रमाद होते हैं।

प्र.937 अप्रमत्तविरत गुणस्थान के कितने भेद हैं?

उत्तर अप्रमत्तविरत गुणस्थान के स्वस्थान अप्रमत्त और सातिशय अप्रमत्त रूप दो भेद होते हैं।

प्र.938 स्वस्थान अप्रमत्त किसे कहते हैं?

उत्तर जो प्रमाद रहित साधु धर्म-ध्यान में लवलीन (षट्-आवश्यक आदि मूलगुणों एवं स्वाध्याय-तत्त्वचिंतवनादि में तत्पर) रहते हैं उन्हें स्वस्थान अप्रमत्त विरत गुणस्थानवर्ती कहते हैं।

प्र.939 सातिशय अप्रमत्त किसे कहते हैं?

उत्तर जो अप्रमत्तविरत उपशमश्रेणी अथवा क्षपक श्रेणी चढ़ने के अभिमुख होता हुआ चारित्र मोह की इक्कीस प्रकृतियों का उपशम या क्षय करने में निमित्तभूत तीन करणों में सर्व प्रथम अध:करण परिणाम को करता है वह साधु; सातिशय अप्रमत्तवर्ती गुणस्थान वाला कहलाता है।

प्र.940 श्रेणी चढ़ने वाला पात्र कौन होता है?

उत्तर सातवें गुणस्थानवर्ती क्षायिक सम्यग्दृष्टि और द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि ही श्रेणी चढ़ सकते हैं।

प्र.941 कौन-से सम्यग्दृष्टि कौन-सी श्रेणी चढ़ सकते हैं और कौन-से सम्यग्दृष्टि श्रेणी नहीं चढ़ सकते हैं?

उत्तर क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी भी चढ़ सकता है और क्षपक श्रेणी भी चढ़ सकता है किन्तु द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि केवल उपशम श्रेणी ही चढ़ सकता है, क्षपक श्रेणी नहीं चढ़ सकता तथा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि और क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि श्रेणी नहीं चढ़ सकते हैं।

प्र.942 पुन: प्रथमोपशम सम्यक्त्व अथवा क्षायोपशमिक सम्यक्त्व वाला जीव किस विधि से श्रेणी चढ़ने का पात्र बन सकता है?

उत्तर सर्व प्रथम; प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाला प्रथमोपशम सम्यक्त्व को छोड़कर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व को ग्रहण करे। फिर अध:करण; अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों के द्वारा पहले अनन्तानुबन्धी कषाय का विसंयोजन करे और अन्तर्मुहूर्त्तकाल तक विश्राम लेकर पुन: अध:करण आदि रूप परिणामों के द्वारा या तो दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियों का उपशम करके द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो जाये या उनका क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाये। तब श्रेणी चढ़ने का पात्र हो सकता है।

प्र.943 विसंयोजन किसे कहते हैं?

उत्तर अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ के कर्म परमाणुओं को अन्य बारह और नोकषाय रूप परिणमाने (बदलने) को विसंयोजन कहते हैं।

प्र.944 मुनिराज द्वारा उपशमश्रेणी अधिक से अधिक कितनी बार प्राप्त की जा सकती है?

उत्तर मुनिराज द्वारा उपशम श्रेणी अधिक से अधिक चार बार प्राप्त की जा सकती है, परन्तु एक भव में दो बार ही प्राप्त की जाती है। पाँचवी बार नियम से मोक्ष प्राप्त करने वाली क्षपक श्रेणी ही होती है।

प्र.945 भव्यात्माओं के अपूर्वकरण परिणामों द्वारा कौन-कौन-से आवाश्यक कार्य होते हैं?

उत्तर भव्यात्माओं के अपूर्वकरण परिणामों द्वारा चार आवश्यक कार्य होते हैं। प्रथम गुणश्रेणी निर्जरा, द्वितीय गुणसंक्रमण, तृतीय स्थिति खण्डन और चतुर्थ अनुभाग खण्डन ये चारों ही कार्य पूर्ववद्ध कर्मों में होते हैं। इन परिणामों के द्वारा जीव मोहनीय कर्म की इक्कीस प्रकृतियों का क्षपण, उपशमन करने के लिए उद्यत होते हैं।

प्र.946 गुणश्रेणी निर्जरा का स्वरूप क्या है?

उत्तर जीवों के गुणित रूप से उत्तरोत्तर समयों में कर्म परमाणुओं का झरना (निर्जरित होना) गुणश्रेणी निर्जरा कहलाती है। जैसे किसी जीव के पहले समय में दस कर्म परमाणु उदय में आये, फिर दूसरे समय में दस × असंख्यात परमाणु उदय में आये इसी तरह तीसरे, चौथे आदि समयों में लगातार असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे कर्मपरमाणुओं का उदय में आना गुणश्रेणी निर्जरा है।

प्र.947 चतुर्थ गुणस्थान में क्या निरन्तर असंख्यात गुणी निर्जरा होती है?

उत्तर नहीं, चतुर्थ असंयत सम्यग्दृष्टि गुणस्थान में असंख्यात गुणी निर्जरा कदापि नहीं होती, बल्कि कहते हैं कि करणलब्धि के काल मात्र में असंख्यात गुणी निर्जरा होती है।

प्र.948 असंख्यात गुणी निर्जरा का प्रारम्भ कौन-से स्थान से होता है?

उत्तर असंख्यात गुणी निर्जरा का प्रारम्भ संयम (व्रत) से होता है। सिद्धांत ग्रन्थों के अनुसार पंचम गुणस्थान (देशसंयत स्थान) से निरन्तर गुण-श्रेणी रूप असंख्यातगुणी निर्जरा प्रारम्भ होती है। (धवल पु.८/८३, ज.ध.पु.१२)

प्र.949 गुणसंक्रमण किसे कहते हैं?

उत्तर जहाँ पर प्रति समय असंख्यात गुणश्रेणीक्रम से परमाणु प्रदेश अन्य प्रकृति रूप परिणमें, उसे गुणसंक्रमण कहते हैं।

प्र.950 स्थितिखण्डन किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों की स्थिति के उपरिम अंश, खण्ड या पोरों को खरोंचकर नष्ट कर देने को स्थिति-खण्डन या स्थिति काण्डकघात कहते हैं।

प्र.951 अनुभाग खण्डन किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों के अनुभाग के उपरिम अंश, खण्ड या पोरों को खरोंचकर नष्ट कर देने को अनुभाग खण्डन या अनुभाग काण्डकघात कहते हैं।

प्र.952 स्थितिखण्डन या अनुभाग खण्डन से जीवों को क्या लाभ है?

उत्तर विशुद्ध परिणामों द्वारा स्थिति खण्डन या अनुभाग खण्डन करने से जीवों का स्थिति सत्त्व व अनुभाग सत्त्व हीन हो जाता है।

प्र.953 पूर्व स्पर्धक किन्हें कहते हैं?

उत्तर जो स्पर्धक अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के पूर्व में पाये जाते हैं, उनको पूर्व

प्र.954 अपूर्वस्पर्धक किन्हें कहते हैं?

उत्तर अनिवृत्तिकरण रूप परिणामों के निमित्त से जिनका अनुभाग अनन्तगुणा क्षीण कर दिया जाता है उनको अपूर्व स्पर्धक कहते हैं।

प्र.955 बादरकृष्टि किन्हें कहते हैं?

उत्तर जिनका अनुभाग अपूर्वस्पर्धक से भी अनन्तगुणा क्षीण हो जाता है उनको बादरकृष्टि कहते हैं।

प्र.956 सूक्ष्मकृष्टि किन्हें कहते हैं?

उत्तर जिनका अनुभाग बादरकृष्टि से भी अनन्तगुणा क्षीण हो जाता है उनको सूक्ष्मकृष्टि कहते हैं। (ये सभी कार्य नवम गुणस्थान में होते हैं।)

प्र.957 अनुभाग किसे कहते हैं?

उत्तर कर्मों के फल देने की शक्ति को अनुभाग कहते हैं।

प्र.958 अविभाग प्रतिच्छेद किसे कहते हैं?

उत्तर अनुभाग शक्ति के सबसे छोटे अंश को अविभाग प्रतिच्छेद कहते हैं।

प्र.959 समय प्रबद्ध किसे कहते हैं?

उत्तर संसारावस्था में प्रतिसमय बँधने वाले कर्म या नोकर्म के समस्त परमाणुओं के समूह को समयप्रबद्ध कहते हैं।

प्र.960 वर्ग किसे कहते हैं?

उत्तर विवक्षित समयप्रबद्ध में सबसे कम अनुभाग शक्ति के अंश अर्थात् अविभाग प्रतिच्छेद जिस परमाणु में पाये जाते हैं, उसे वर्ग कहते हैं।

प्र.961 वर्गणा किसे कहते हैं?

उत्तर समान संख्या वाले अविभाग प्रतिच्छेद जिनमें पाये जायें, उन सब वर्गों के समूह को वर्गणा कहते हैं।

प्र.962 स्पर्धक किसे कहते हैं?

उत्तर जिनमें अविभागी प्रतिच्छेदों की समान वृद्धि पायी जाये उन वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं।

प्र.963 उपशान्त-कषाय और क्षीणकषाय गुणस्थान में क्या अन्तर है?

उत्तर उपशान्त-कषाय जीव के यद्यपि मोह का उदय नहीं है फिर भी मोहनीय कर्म की सत्ता है किन्तु क्षीणकषाय जीव के मोहनीय कर्म का उदय भी नहीं है और अस्तित्व भी नहीं है। फिर भी दोनों के ही परिणामों में कषायों का अभाव है अत: दोनों के यथाख्यात चारित्र होता है और दोनों ही बाह्य और अभ्यन्तर परिग्रहों से रहित होने के कारण निर्ग्रन्थ कहे जाते हैं।

प्र.964 तेरहवें गुणस्थान में केवली भगवान को कौन-सी नव लब्धियों का अपूर्व लाभ होता है?

उत्तर केवली भगवान को क्षायिक-सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक-ज्ञान, क्षायिक-दर्शन, क्षायिक-दान, क्षायिक-लाभ, क्षायिक-भोग, क्षायिक-उपभोग और क्षायिक-वीर्य (शक्ति) इन नव लब्धियों का अपूर्व लाभ प्राप्त होता है।

प्र.965 गुणस्थानों में संसारी जीव किस क्रम-रीति से चढ़ता-उतरता है?

उत्तर 1. अनादि मिथ्यादृष्टि जीव करणलब्धि के प्रभाव से सम्यक्त्वघातक प्रकृतियों के उपशम से असंयत सम्यग्दृष्टि नामक चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

2. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

3. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से मिश्र नामक तीसरे गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

4. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व एवं पाँच पापों के एकदेश त्याग रूप परिणामों से देशविरत नामक गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

5. सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्व एवं प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से होने वाले चारित्र रूप परिणाम से अप्रमत्तविरत नामक सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं।

(तात्पर्य यह है कि मिथ्यादृष्टि जीव सीधे सासादन और प्रमत्तविरत गुणस्थानों को प्राप्त नहीं करते हैं।)

6. सासादन गुणस्थानवर्ती जीव ऊपर सम्बन्धी किसी भी गुणस्थान को प्राप्त नहीं होते बल्कि नियम से मिथ्यात्व गुणस्थान को ही प्राप्त करते हैं।

7. मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव सम्यक्त्व-प्रकृति के उदय से चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं अथवा मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

8. अविरत सम्यक्त्व गुणस्थानवर्ती उपशम सम्यग्दृष्टि जीव सम्यक्त्व प्रकृति के उदय से वेदक (क्षायोपशमिक) सम्यक्त्व को प्राप्त करते हैं।

9. वेदक सम्यग्दृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी की विसंयोजना और दर्शन मोहनीय की तीन प्रकृतियों का अर्थात् सप्त प्रकृतियों का क्षय होने पर क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त करते हैं।

10. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से पंचम गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

11. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से सप्तम गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

12. चतुर्थ गुणस्थानवर्ती जीव मिश्र प्रकृति के उदय से तीसरे गुणस्थान को, अनन्तानुबन्धी के उदय से दूसरे गुणस्थान को और मिथ्यात्व के उदय से प्रथम गुणस्थान को प्राप्त हो140 / 196ते हैं।

13. पंचम गुणस्थानवर्ती जीव प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के अनुदय से सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करते हैं। इस गुणस्थानवर्ती जीव अविशुद्धि के योग से नीचे के चारों गुणस्थानों को भी प्राप्त हो सकते हैं।

14. षष्ठ-गुणस्थानवर्ती जीव नीचे के पाँचों गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं।

15. षष्ठ-गुणस्थानवर्ती जीव अप्रमत्तविरत गुणस्थान पर्यन्त जाते हैं, उससे ऊपर नहीं जाते हैं।

16. सप्तम गुणस्थानवर्ती जीव अपूर्वकरण को, छठे गुणस्थान को और मरण की अपेक्षा देवगति

सम्बन्धी चतुर्थ गुणस्थान को (इस तरह तीन गुणस्थानों) को प्राप्त होते हैं। उपशम श्रेणी वाले आठवें नौवें एवं दसवें गुणस्थानवर्ती जीव चढ़ने की अपेक्षा अनन्तर ऊपर के ग्यारहवें गुणस्थान तक, गिरने की अपेक्षा अनन्तर नीचे (दसवें आदि) और मरण की अपेक्षा देवगति सम्बन्धी चतुर्थ गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

17. ग्यारहवें गुणस्थानवर्ती जीव गिरने की अपेक्षा दसवें आदि निचले और मरण की अपेक्षा चौथे गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

18. क्षपकश्रेणी वाले जीव आठवें और नौवें गुणस्थानवर्ती जीव चढ़ने की अपेक्षा अनन्तर ऊपर के दसवें गुणस्थान को प्राप्त होते हैं।

19. क्षपक क्षेणी वाले जीव दसवें गुणस्थानवर्ती जीव नियम से बारहवें गुणस्थानों को प्राप्त होते हैं और वहाँ से क्रम से आगे के गुणस्थानों को प्राप्त होते हुए मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्र.966 मरण किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर तृतीय गुणस्थान तथा क्षपकश्रेणी के चारों गुणस्थान और तेरहवें गुणस्थान को छोड़कर शेष गुणस्थानों में मरण होता है।

प्र.967 किस गुणस्थान में मरणकर जीव, किस गति को प्राप्त होता है?

उत्तर प्रथम और चतुर्थ गुणस्थान से मरणकर जीव चारों गतियों में से किसी भी गति में जा सकता है। सासादन गुणस्थान में मरणकर जीव नरक गति में नहीं जाता। चौदहवें गुणस्थान से निर्वाण होता है (अर्थात् पण्डित-पण्डित मरण होता है) और शेष सात गुणस्थानों से मरण कर जीव नियम से देवगति में जन्म लेता है।

प्र.968 किन-किन अवस्थाओं में जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं?

उत्तर 1. मिश्र गुणस्थान वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

2. निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था को धारण करने वाले मिश्रकाययोगी जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

3. क्षपकश्रेणी सम्बन्धी आठवें, नौंवें, दसवें एवं बारहवें गुणस्थानवर्ती जीव मरण को प्राप्त नहीं होते।

4. उपशम श्रेणी चढ़ते हुए जीव अपूर्वकरण गुणस्थान के प्रथम भाग वाले (जब तक निद्रा और प्रचला की बन्ध-व्युच्छित्ति नहीं होती है) मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

5. प्रथमोपशम सम्यक्त्व वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

6. तेरहवें गुणस्थान वाले जीव (केवली) मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

7. सातवें नरक के द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ गुणस्थान वाले जीव मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

8. अनन्तानुबन्धी कषाय की विसंयोजना करके मिथ्यात्व को प्राप्त होने वाले जीव अन्तर्मुहूर्त्त तक मरण को प्राप्त नहीं होते हैं।

9. क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव जब तक मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्क का क्षय नहीं कर देता है अर्थात् जब तक कृतकृत्यता (या कृतकृत्य वेदकता)

रहती है तब तक मरण को प्राप्त नहीं होते हैं। (जयधवला पु.२, २१५ से २२०)

१०. सिद्ध जीव सांसारिक जन्म मरण से रहित होते हैं। (गुणस्थान चार्ट देखिये जै.सं.अ.१८ पृ.१८६)

प्र.969 कौन-से मत से कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि का मरण होता है?

उत्तर लब्धिसार के मत से कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि का मरण होता है।

प्र.970 कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि जीव मरकर कहाँ-कहाँ उत्पन्न नहीं होते हैं?

उत्तर कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्व का काल अन्तर्मुहूर्त्त है, जिस काल के व्यतीत होते ही जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि बन ही जाता है। उस अन्तर्मुहूर्त्त के चार भागों में से प्रथम भाग में मरण प्राप्त जीव देवों में, दूसरे भाग में मरण प्राप्त जीव देवों और मनुष्यों में, तीसरे भाग में मरण प्राप्त जीव देव, मनुष्य और तिर्यञ्चों में तथा चौथे भाग में मरण प्राप्त जीव चारों गतियों में से किसी भी गति में उत्पन्न होते हैं।

प्र.971 चौदह गुणस्थानों में आयुकर्म को छोड़कर अन्य सातकर्मों की गुणश्रेणी निर्जरा (असंख्यात गुणी निर्जरा) किस प्रकार होती है?

उत्तर सम्यक्त्व उत्पत्ति काल अर्थात् सातिशय मिथ्यादृष्टि, श्रावक, विरत, अनन्तानुबन्धी कर्म का विसंयोजन करने वाला, दर्शनमोहनीय कर्म का क्षय करने वाले, कषायों का उपशम करने वाले ८, ९, १०वें गुणस्थानवर्ती जीव, उपशान्त कषाय, कषायों का क्षपण करने वाले ८, ९, १० वें गुणस्थानवर्ती जीव, क्षीणमोह, सयोग केवली और अयोग केवली जिन, इन ग्यारह स्थानों में द्रव्य की अपेक्षा कर्मों की निर्जरा क्रम से असंख्यातगुणी असंख्यातगुणी (गुणश्रेणी) अधिक अधिक होती जाती है।

प्र.972 क्या आगे-आगे के गुणस्थानों में निर्जरा के समान निर्जरा का काल भी अधिक-अधिक है?

उत्तर नहीं, निर्जरा से निर्जरा होने का काल विपरीत है। क्रम से उत्तरोत्तर संख्यात गुणा-संख्यातगुणा हीन है।

प्र.973 अयोगकेवली गुणस्थान में केवली भगवान की क्या विशेषता है?

उत्तर जो अठारह हजार शीलों के स्वामी हैं, जिनके कर्मों के आश्रव का द्वार बंद हो गया है तथा सत्त्व और उदय रूप अवस्था को प्राप्त कर्म रूप रज की सर्वथा निर्जरा होने से जो उस कर्म से सर्वथा मुक्त होने के सम्मुख हैं, ऐसे योग रहित केवली; चौदहवें गुणस्थानवर्ती केवली भगवान होते हैं।

प्र.974 गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान का स्वरूप कैसा है?

उत्तर जो ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मों से रहित हैं, अनन्तसुख रूपी अमृत का अनुभव करने वाले शांतिमय हैं, नवीन कर्मबंध के कारणभूत मिथ्यादर्शनादि भाव कर्म रूपी अंजन से जो रहित हैं, जो नित्य हैं, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु ये आठ मुख्य गुण जिनके प्रकट हो चुके हैं, जो कृतकृत्य हैं अर्थात् जिनको कोई कार्य करना शेष नहीं है और जो लोक के अग्रभाग में निवास करने वाले हैं उसको सिद्ध भगवान कहते हैं।

सम्यग्ज्ञान भूषण पदवी हेतु नवम प्रश्न पत्र

समय : 3.. दिन | अंक : 100

❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं। ❖ सभी प्रश्नों के उत्तर लाइन वाले पेपर्स पर पेरा बनाकर लिखें। ❖ उत्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही लिखें। ❖ उत्तर लिखकर काटे जाने या घिसे जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

प्र.1. ज्योतिषी देवों का गमन किस गति से होता है?
प्र. 2. सूर्य, चन्द्रादि की किरणें किस स्वभाव वाली हैं?
प्र. 3. सूर्य में रहने वाले देव की आयु कितनी होती है?
प्र. 4. युग किसे कहते हैं, और युग का प्रारम्भ कब होता है?
प्र. 5. स्वर्ग की दूरी मध्यलोक से कितनी है?
प्र. 6. भरत क्षेत्र के तीर्थंकरों के आभूषण कौन-से स्वर्ग के मानस्तम्भ पर रहते हैं?
प्र. 7. वैमानिक देवों सम्बन्धी पटलों की संख्या कितनी है?
प्र. 8. स्वर्गों का सौधर्म आदि नाम क्यों है?
प्र. 9. ग्रैवेयक क्यों कहते हैं? या ग्रैवेयक का अर्थ क्या है?
प्र.10. सौधर्म आदि इन्द्रों की प्रधानदेवी की सहयोगी देवियाँ कितनी होती हैं?
प्र.11. स्वर्गों में देव दर्शन की क्या व्यवस्था होती है?
प्र.12. देव पर्याय में एक भव में मोक्ष जाने वाले कौन-कौन से भव्य जीव हैं?
प्र.13. अनुदिश एवं अनुत्तर विमानों में क्या सम्यग्दृष्टि ही जन्म लेते हैं?
प्र.14. सुख कितने प्रकार का होता है? नाम बतलाये?
प्र.15. तिर्यञ्च पर्याय में कौन-से देव उत्पन्न नहीं होते हैं?
प्र.16. संक्षेप-ओघ किसकी संज्ञा है?
प्र.17. चतुर्थ गुणस्थान में कौन-से भाव होते हैं?
प्र.18. सर्वार्थसिद्धि विमान से सिद्धशिला कितने ऊपर स्थित है?
प्र.19. अप्रमत्त गुणस्थान के कितने प्रकार हैं?
प्र.20. विसंयोजना किसे कहते हैं?

आधार :आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित-'**आगम-अनुयोग**', (प्रश्नोत्तर प्रदीप)

प्रश्न पत्र के पूर्व में दिये गये प्रश्नोत्तरों को पढ़कर उनका चिंतवन-मंथन कर उत्तर-पुस्तिका की पूर्ति करें।

परीक्षार्थी परिचय

नाम..... उम्र .....
पिता/माता/पति का नाम .....
पता .....
.....
मोबाईल/फोन नं. .....

सम्यग्ज्ञान भूषण पदवी हेतु शिविर का आयोजन

आगम अनुयोग प्रश्नोत्तर प्रदीप

मंगल आशीर्वाद एवं प्रेरणा- आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज